श्री दादूदर्शन

डॉ. दयाराम स्वामी
एम.बी.बी.एस. एम.डी. (स्वर्णपदक)
वरिष्ठ मानसिक रोग विशेषज्ञ एवं पूर्व प्रमुख विशेषज्ञ
एस.एम.एस. हॉस्पिटल, जयपुर

भारतवर्ष में सत्रहवीं शताब्दी के पूर्व जब मुगल साम्राज्य था तथा बादशाह अकबर का काल था। धर्म के नाम पर हिन्दू एवं मुसलमान परस्पर विरोधी थे। अकबर की नीति हिन्दू एवं मुस्लिम धर्म को समीप लाने की थी। वह काल दो धर्म तथा संस्कृतियों का संन्धिकाल भी कहा जाता है। उसी काल में महान् विचारक, परम साधक महात्मा दादू ने लोक कल्याण हेतु अवतार ग्रहण किया। प्रभु आज्ञा से सनक ऋषि भारत भूमि की पवित्र धरा पर दादू जी के रूप में अवतारित हुए थे।

आविर्भाव एवं गृहत्याग

दादू जी का अवतरण स्थान अहमदाबाद माना गया है। सन् 1601 फाल्गुन शुक्ल अष्टमी को साबरमती नदी में नागर ब्राह्मण लोदीरामजी को कमलदल में प्रभु आज्ञा से प्राप्त हुए थे। लोदीराम जी निःसन्तान थे तथा प्रतिदिन प्रभु से पुत्रप्राप्ति की याचना करते थे। उन्होंने एवं उनकी धर्मपराण पत्नी ने अतीव चाव व लाड़ प्यार से दादू जी का पालन पोषण किया। ग्यारह वर्ष की आयु में एक दिन संध्यासमय कांकरिया तालाब पर बालक दादू जी अन्य बालकों के संग खेल रहे थे, तभी परमात्मा वृद्धरूप धारण कर पधारे। कहा जाता है ''और भयभीत हो भाग गये सब, दादूजी दौड़ नजदीक ही आये''।

दादूजी ने वृद्ध भगवान् को नमन कर एक पैसा भेंट स्वरूप अर्पित किया। वृद्ध भगवान् ने आज्ञा फरमायी कि जो वस्तु सर्वप्रथम मिले ले आओ। दादूजी को सर्वप्रथम एक पान की दुकान मिली। अतः दादूजी एक पैसे का पान लेकर आये तथा वृद्ध भगवान् को अर्पित किया। वृद्ध भगवान् ने दादूजी को उपदेश दिया तथा जगत्कल्याण के लक्ष्य को याद दिलाया, जिस हेतु दादूजी का अवतार हुआ था । दादूजी गृहत्याग कर आत्म चिंतन हेतु चल पड़े।

साधना

अहमदाबाद से चल कर आबू होते हुए पुष्कर के नाग पहाड़ की श्रृंखला की एक पहाड़ी जो कल्याणपुर वर्तमान में करडाला ग्राम जो कि जिला नागौर राजस्थान में स्थित है, दादूजी इस ग्राम की पहाड़ी में स्थित एक ककेड़े के पेड़ के नीचे साधना करने लगे। छः वर्ष तक कठोर साधना द्वारा आत्मानुभव किया।

सैद्धान्तिक संघर्ष

आत्मनुभूति के पश्चात् वे सांभर पधारे। यहाँ से उन्होंने अपनी अनुभूति के अनुसार उपदेश देना प्रारम्भ किया। वे प्राणी मात्र में प्रेम, सत्य, अहिंसा, निर्वैरिता व दया भाव मानव की स्वाभाविक प्रवृति मानते थे। अतः कालान्तर में ''दादूदयाल'' नाम से प्रसिद्ध हुए। उनका यह दृढ़ निश्चय था कि ईश्वरीय सृष्टि में जाति-धर्म के भेदभाव को, ऊँच-नीच व स्पृश्यास्पृश्य का कोई स्थान नहीं है। वे राम और रहीम को एक ही मानते थे। वे निर्गुण भक्ति धारा के उपासक थे।

उनके इन विचारों का कुछ समय तक हिन्दू तथा मुसलमान दोनों ने ही विरोध किया तथा उन्हें कई तरह के कष्ट पहुँचायें, पर उनके धैर्य तथा समत्व का धीरे धीरे उभय पक्ष पर व जनमानस पर प्रभाव होने लगा तथा दोनों ही धर्मानुयायी श्री दादूजी महाराज में श्रद्धा रखने लगे। सांभर में चौदह वर्ष के काल में आपके अनेकों शिष्य बने।

इनमें बीकानेर राजघराने के भीमराज जी बड़े सुन्दरदास जी के नाम से विख्यात हुए तथा वे दादूपंथी नागर सम्प्रदाय के प्रथम पुरुष माने जाते हैं। आप सांभर में ही सर्वप्रथम दादूजी महाराज के शिष्य बने।

आमेर निवास

सम्वत् 1632 से 1644 (12 वर्ष) तक उन्होंने आमेर में निवास किया। जिस गुफा में वे साधना करते थे वह आज भी आमेर के दादूद्वारे के नीचे सुरक्षित है। आमेर में मानसिंह जी के पिता महाराजा भगवन्त दास जी राज्य करते थे। वे दादूजी के परम श्रद्धावान् भक्त थे। आमेर निवास के समय दादूजी की कीर्ति दूर दूर तक फैली। सीकरी में बादशाह अकबर ने भी उनकी प्रशंसा की। अकबर ने महाराजा भगवन्तदास जी से दादूजी को सीकरी लाने का आग्रह कर दर्शन करने की इच्छा प्रकट की। अकबर दादूजी के विचारों से बहुत प्रभावित हुए। और अकबर ने दादूजी के उपदेश के प्रभाव से ही ''गौहत्या'' बन्द कर दी। अकबर ने दादूजी के विषय में कहाः-

दादू नूर अल्लाह है, दादू नूर खुदाय।
दादू मेरा पीव है, कहे अकब्बर शाह।।

भ्रमण

सीकरी से लौट कर दादूजी ने मौलिक विचारों के प्रचार के लिए विभिन्न क्षेत्रों का भ्रमण किया तथा निश्चयात्मक विचारों से जनमानस को प्रभावित किया। भ्रमणकाल में वे तीन वर्ष पुराने साधना स्थल करडाले में रहे।

तत्पश्चात् सांभर में नरायणा के प्रशासक खंगारोत उन्हें नरायणा ले आये। संवत् 1657 से 1660 तक वे नरायणा विराजमान रहे। आपकी सरस, अमृतमयी वाणी का ऐसा प्रभाव पड़ता थ कि सैकड़ों की संख्या में उच्चकोटि के विचारक उनके शिष्य बने।

दादूजी ने अपने विचारों को साखी और शब्दों में भी गुम्फित किया। उनकी इस रचना की संज्ञा ''श्रीदादूवाणी'' है। इसमें 37 प्रकरण साखी भाग के हैं। पद भाग में 27 राग रागनियों में 445 पद हैं। आत्मचिन्तन की प्रवृत्ति वाले साधकों को वाणी के पठन-पाठन से परम शांति प्राप्त होती है। उन्होंने वर्गभेद के बिना हिन्दू व मुसलमान दोनों को ही अपना शिष्य बनाया। उनके मुसलमान शिष्यों में रज्जब जी, बखना जी, वाजिद जी, नागर व निजाम जी नाम उल्लेखनीय हैं तथा हिन्दू शिष्यों में बड़े सुन्दरदासजी, शिष्य गरीबदास जी, मस्कीनदास जी, छोटे सुन्दरदास जी जगजीवन जी, टीला जी इत्यादि इस प्रकार प्रसिद्ध बावन शिष्य हुए।

निर्वाण

दादूजी ने अपनी विचारधारा से मानवमात्र को धर्म, जातिभेद एवं रागद्वेष की संतापाग्नि से बचाने का पर्याप्त प्रयास किया तथा उनका प्रयास बहुत अंशों में सफल रहा। वे उच्चकोटि के साधक थे। उन्होंने ज्ञान भक्ति व वैराग्य की मौलिक धारा का प्रचार कर निर्गुण सन्तपरम्परा में अपना अग्रणी स्थाना बनाया और संवत् 1660 ज्येष्ठ कृष्णा अष्टमी को ब्रह्मलीन हो गये। दादूजी की देह को भैराणाधाम लाया गया, दाह संस्कार पर विचार विमर्श चल ही रहा था। तभी दादू जी महाराज की देह अन्तर्ध्यान हो गयी तथा ''सत्यराम'' कहते हुए भैराणा पर्वत की गुफा में समाहित हो गयी। जनश्रुति है कि ''दादू और कबीर की काया भई कपूर''।

इस प्रकार सगुण देह निर्गुण में समाहित हो गई। पाठक उनकी अमृतवाणी का कुछ रसास्वादन करें। साधक वर्ग को सर्वप्रथम मन के स्थैर्य के लिए नामजप का आश्रय लेना पड़ता है। जप के लिए अनेकों मंत्र साधना के लिए निर्दिष्ट हैं। इन्हीं मंत्रों में ''रामनाम मंत्र'' को अग्रणी माना गया है। सभी सन्त साधकों ने व ऋषि मुनियों ने रामनाम मंत्रों की पर्याप्त महिमा गायी है। दादू जी ने अपनी वाणी में 'सुमरण के अंग' में रामजप की अतीव महत्ता प्रदर्शित की है। वे कहते हैं:-

दुख दरिया संसार है, सुख का सागर राम।
सुख सागर चल जाइये, दादू तजिबे काम।।

मेरे संसा को नहीं, जीव मरण का राम।
सुपने ही जिन वीसरे, मुख हिरदे हरिनाम।।

दादू राम नाम निज औषधि, काटै कोटि विकार।
विषम व्याधि तें उबरे, काया कंचन सार।।

दादू सब ही वेद पुरान पढि, नेह नाल निरधार।
सब कुछ इनहीं मांहि है, क्या? करिये विस्तार।।

दादूअलिफ अल्लाह का, जे पढ़ जाणै कोय।
कुरान कतेबा इल्म सब, पढि कर पूरा होय।।

हिरदै राम रहे जा जन के, ताको ऊरा कौण कहै।
अठ सिद्धि नौ निधि ताके, आगे सनमुख सदा रहै।।

वंदत तीनों लोक बापुरा कैसे दरसत है।
नाव निसान सकल जग, ऊपर दादू देखत है।।

नामजप पर दादूजी की कितनी निष्ठा थी? यह उपर्युक्त साखियों से स्पष्ट है। निरन्तर नाम जप से साधक के अन्तःकरण में एक ऐसी लगन उत्पन्न होती है, कि वह अपने उपास्य से अरस-परस होना चाहता है। साधक की इस दशा का नाम विरहदशा है। तुलसी, सूर, मीरा, नानक, रैदास, कबीर, नामदेव आदि भक्त संतों ने इस दशा का अपनी अपनी रचनाओं में सम्यक् दिग्दर्शन कराया है।

क्रमशः

।।सत्यराम।।

(पूज्य चरण तपोमूर्ति स्व. स्वामी श्री मंगलदास जी महाराज के लेख के आधार से)